IMPACT FACTOR 7.50 (SJIAI)

BIHAR SHODH SAMAAGAM

Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 4, Issue 2, April-june, 2026
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
https://doi.org/10.5281/zenodo.21196365

ISSN : 3048-6971

पंडित दीन दयाल उपाध्याय और उनके सपनों का कश्मीर

सौरभ राय
राजनीति विज्ञान, दिल्ली विश्वविद्यालय

परिचय

कश्मीर, जो की प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का सिरमौर रहा, वही कश्मीर भारत की स्वतंत्रता से लेकर अब तक भारतीय राजनीति में एक ज्वलंत मुद्दा बना हुआ है। यह समय-समय पर मीडिया, राजनीतिक गलियारों, विश्वविद्यालयों की कक्षाओं और भारतीय जनमानस में चर्चा का विषय बना रहता है- कभी अपनी खूबसूरत वादियों में पर्यटन के लिए, तो कभी अपने केसर और सेब जैसे एकाकी उत्पादों के लिए, कभी धारा 370 और 35A द्वारा प्राप्त विशेष रियायतों के लिए तो कभी उनके उन्मूलन के लिए, कभी 1990 में हुए कश्मीरी हिंदुओं के नरसंहार और पलायन के लिए, तो कभी घाटी में बढ़ते आतंकवाद और इस्लामिक कट्टरता के लिये कश्मीर स्वतंत्रता के बाद से ही भारतीय राजनीति तथा लोकमानस में चर्चा का विषय बना रहा है। लेकिन पंडित जी के विचारों में कभी ऐसे विशेष रियायत प्राप्त व आतंकवादग्रसित कश्मीर की कल्पना नहीं की गई थी बल्कि उनके सपनों का कश्मीर एकता, अखंडता, समृद्धि और परस्पर सद्भावना से पोषित कश्मीर था। वह मानते थे कि कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है और वह भी भारत के अन्य प्रांतों की भांति समृद्धि तथा विकास का हकदार है। उनकी दृष्टि में कश्मीर का केवल भौगोलिक महत्व नहीं था, बल्कि उनका मनाना था कि सांस्कृतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी कश्मीर भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का अभिन्न अंग है।

भारतीय राजनीति के इतिहास में 5 अगस्त 2019 का दिन कश्मीर और भारतीय संघ के लिए एक ऐतिहासिक दिन था, जब भारतीय संसद ने अनुच्छेद 370 और अनुच्छेद 35A का उन्मूलन कर कश्मीर को प्राप्त विशेष रियायतें समाप्त कर दीं। बहुत से लोगों के लिए यह क्षण कश्मीर में उगते विकास के उस नए सूर्य का प्रतीक था, जो उस कश्मीर घाटी को, विकास की मुख्यधारा में लाने का कार्य करेगा, जो कश्मीर घाटी स्वतंत्रता के बाद से विकास के नाम पर उपेक्षा का विषय रही थी।

मेरे इस लेख के माध्यम से हम यह जानने और समझने का प्रयास करेंगे कि पंडित दीन दयाल उपाध्याय, जो भारतीय जनसंघ (बाद में भारतीय जनता पार्टी) के प्रमुख संस्थापकों व भारतीय आध्यात्म तथा दर्शन के प्रमुख आधुनिक विचारकों के तौर पर एकात्म मानववाद के प्रणेता थे, उनकी एक स्वतंत्र कश्मीर को लेकर भारतीय नीति निर्माताओं से क्या अपेक्षाएं थी व कश्मीर के भविष्य को लेकर पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी ने क्या सपना देखा था। साथ ही अपने इस लेख के माध्यम से हम यह भी समझने का प्रयास करेंगे कि पंडित जी क्यों अनुच्छेद 370 को कश्मीर के भारत में विलय तथा उसके विकास में बाधा मानते थे?

जम्मू कश्मीर राज्य का एक संक्षिप्त इतिहास व 370 की शुरुआत

1947 में हुआ भारत विभाजन सम्पूर्ण भारतीय इतिहास की सबसे भीषण त्रासदियों में से एक था जिससे पाकिस्तान नामक एक नव स्वतंत्र देश का जन्म हुआ। इसने एक बड़ी समस्या को जन्म दिया जो एक नए राष्ट्र के पुनर्निर्माण और उसकी क्षेत्रीय अखंडता को बनाए रखने में बाधा था। भारत विभाजन और अंग्रेजों की "लैप्स ऑफ पैरामाउंटसी" नीति के कारण, भारत की देशी रियासतों को यह अधिकार मिल गया कि वे स्वयं तय करें कि वे स्वतंत्र रहेंगी, भारतीय संघ का हिस्सा बनेंगी या पाकिस्तान में शामिल होंगी। तत्कालीन भारतीय उपप्रधानमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल और उनके सचिव वी.पी. मेनन की दूरदर्शिता के चलते, जूनागढ़, हैदराबाद, और कश्मीर को छोड़कर अन्य रियासतों का भारत में शांतिपूर्ण विलय हो गया। बाद में, जूनागढ़ का विलय जनमत संग्रह के द्वारा और हैदराबाद का विलय "ऑपरेशन पोलो" नामक पुलिस कार्यवाही के माध्यम से किया गया। लेकिन कश्मीर रियासत, जिसके

भारतीय संघ में विलय की जिम्मेदारी पंडित नेहरू के अधिकार क्षेत्र का विषय थी, 1948 के भारत पाकिस्तान युद्ध तक दोनों देशों के मध्य विवाद का विषय बनी रही, और अंततः कश्मीर के तत्कालीन राजा हरी सिंह द्वारा इंस्ट्रूमेंट ऑफ एक्सेशन (भारतीय संघ का विलय-पत्र) पर हस्ताक्षर के जरिए भारतीय संघ का हिस्सा बनी।

यदि हम कश्मीर के इतिहास की बात करें तो इसका जिक्र हमें महाभारत, नीलमत पुराण और कल्हण की राजतरंगिणी में मिलता है उपरोक्त पुराणों व धर्मग्रंथों के अनुसार, कश्मीर को महर्षि कश्यप की भूमि माना जाता है क्योंकि प्रारंभ में उन्हीं के द्वारा इसे बसाया गया था। कश्मीर की उसी पवित्र भूमि पर चौथी बौद्ध परिषद, जो 72 ई. में कश्मीर के कुंडलवन में महाराजा कनिष्क के शासनकाल में, वसुमित्र की अध्यक्षता में आयोजित की गई थी, और इसके कुछ समय बाद कश्मीर महायान बौद्ध धर्म का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया। इसके उपरांत पूरे गुप्त और गुप्तोत्तर काल तक संपूर्ण दक्षिण पूर्व एशिया मे बौद्ध धर्म की महायान शाखा के एक प्रमुख तीर्थ के रूप में इसका विकास हुआ और धीरे-धीरे, समय बीतने के साथ-साथ 10वीं शताब्दी तक अभिनवगुप्त के नेतृत्व में कश्मीर शैव मत का प्रमुख केंद्र बनकर उभरा तथा यहीं से संपूर्ण दक्षिण एशिया में शैव मत का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ।

दिल्ली सल्तनत की स्थापना के साथ ही कश्मीर में भी इस्लामिक शासन की स्थापना हुई, और मुगलों के आगमन के बाद कश्मीर में मुगल आधिपत्य स्थापित हो गया। इस दौरान, कश्मीर, जो शांति और सौहार्द का प्रतीक था, रक्तरंजित हो गया, जिसमें कश्मीरी हिंदुओं और शांतिप्रिय बौद्ध उपासकों का जबरन धर्मांतरण और विस्थापन देखा गया। 18वीं शताब्दी तक आते-आते, मुगलों की कश्मीर पर राजनीतिक पकड़ कमजोर होती गई, और कश्मीर पर महाराजा रणजीत सिंह के नेतृत्व में सिखों का अधिकार हो गया। महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु और प्रथम आंग्ल-सिख युद्ध (1845-1846) में सिख सेना की पराजय के बाद, अंग्रेजों ने युद्ध क्षतिपूर्ति के नाम पर कश्मीर की 80,000 वर्ग किलोमीटर से अधिक भूमि का अधिग्रहण कर लिया। हालांकि कश्मीर घाटी को छोड़कर कश्मीर की अन्य भूमि अंग्रेजों के आर्थिक हितों के लिए कम उपयोगी थी, लेकिन कश्मीर घाटी की सामरिक स्थिति से अंग्रेज भलीभाँति परिचित थे। इसलिए अंग्रेजों ने लाहौर की संधि के तहत कश्मीर का हिस्सा महाराजा गुलाब सिंह को 75 लाख रुपये में दे दिया, जो पहले महाराजा रणजीत सिंह के एक सामंत थे। इसी डोंगरा वंश के अंतिम शासक महाराजा हरी सिंह ने कश्मीर के भारत में विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए थे।

आर्टिकल 370, जिसे उस समय आर्टिकल 306A के तौर पर संविधान में शामिल किया गया, का मसौदा 1949 में एन गोपालस्वामी आयंगर द्वारा तैयार किया गया था। इसके अंतर्गत जम्मू-कश्मीर रियासत को विशेष अधिकार मिले, जैसे एक अलग संविधान सभा, राज्य के मुखिया को प्रधानमंत्री का पद, और राज्य की विधायिका को अन्य राज्यों की विधानसभाओं की अपेक्षा अधिक अधिकार व भारतीय संसद की कई शक्तियाँ की जम्मू कश्मीर मे निष्क्रियत जैसे अनेक विशेष प्रावधान शामिल थे। उस समय इस मसौदे का कांग्रेस के अंदर और विपक्ष द्वारा विरोध हुआ था। पंडित दीन दयाल उपाध्याय और श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने भी इसका कडा विरोध किया। पंडित दीन दयाल उपाध्याय का मानना था कि कश्मीर भारत के लिए भावनात्मक और राजनीतिक मुद्दा है और आर्टिकल 370 में मौजूद प्रावधान कश्मीर के भारत में पूर्ण एकीकरण के मार्ग में एक बड़ी बाधा हैं। वहीं दूसरी ओर जवाहरलाल नेहरू का मानना था कि जम्मू कश्मीर को आर्टिकल 370 के तहत प्राप्त विशेष रियायतें समय के अनुसार धीरे-धीरे अप्रभावी हो जाएंगी।

पंडित उपाध्याय का मानना था कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 ने कश्मीर को अलगाव में डालकर शेष भारत से अलग एक स्वतंत्र पहचान बनाने का अवसर दिया हैं जो भारत की एकता, अखंडता और संप्रभुता के आदर्शों के खिलाफ है। वह इस अनुच्छेद को भारतीय संविधान से हटाने के पक्षधर थे क्योंकि कश्मीर को एक विशेष राज्य का दर्जा देना भविष्य में भारत की एकता और अखंडता के लिए एक बड़ी चुनौती साबित होगा तथा जम्मू कश्मीर और शेष भारत के अन्य राज्यों के मध्य दूरी पैदा करेगा। वह इस बात पर जोर देते थे कि कश्मीर में भी शेष भारत के समान नागरिकता और समान कानून होने चाहिए, जिससे वहां के लोग और शेष भारत के लोग भारतीयता की एक समान भावना महसूस करें। उनके दृष्टिकोण में, कश्मीर में शिक्षा, स्वास्थ्य, और आर्थिक विकास के लिए मजबूत बुनियादी ढाँचा होना चाहिए, ताकि वहाँ के लोग गरीबी और अशिक्षा से बाहर निकल सकें। वह चाहते थे कि कश्मीर एक पर्यटन और सांस्कृतिक केंद्र बने, जिससे वहाँ की सुंदरता और धरोहर को दुनिया के सामने प्रस्तुत किया जा

सके। पंडित दीन दयाल जी ने पाञ्चजन्य, अक्तूबर 1, 1956 के अंक मे प्रकाशित अपने एक लेख मे लिखा कि "कश्मीर का अलग संविधान और उसके विशेष अधिकार हमारी बाहरी विविधता के प्रतीक नहीं, बल्कि मौलिक विघटन का संकेत हैं। नेहरू जी भले ही धर्मनिरपेक्षता और पंथनिरपेक्षता की बातें करते हों, लेकिन उन्हें मुसलमानों और उनकी देशभक्ति पर विश्वास नहीं है। वे मुसलमानों को कुछ पद देकर उनका समर्थन खरीदने की कोशिश करते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि ईमानदार और देशभक्त मुसलमान पीछे रह जाते हैं और पदलोलुप व्यक्ति आगे आ जाते हैं। बख़्शी और अब्दुल्ला दोनों ही इस प्रवृत्ति के परिणाम हैं ,स्थिति और प्रवृत्ति के कारण उनमें केवल अंतर की मात्रा हो सकती है, परंतु उनकी मूल प्रकृति एक ही है"।

भारत सरकार की कश्मीर नीति में साहस की कमी है:

एक बार नेहरूजी ने 1953 में दिल्ली में दिए अपने एक भाषण में कहा कि कश्मीर समस्या के समाधान के रूप में वर्तमान युद्धविराम रेखा के आधार पर समझौते का प्रस्ताव रखा गया था। हालांकि, उन्होंने यह नहीं बताया कि यह प्रस्ताव वापस लिया गया या नहीं। बल्कि, उनके भाषण से यह प्रतीत होता है कि प्रस्ताव अब भी पूर्ववत ही है। उनके इस भाषण के जवाब में पंडित दीन दयाल उपाध्याय ने नागपुर से अकोला जाते वक्त अपने एक बयान में कहा कि "यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि प्रधानमंत्री आक्रमणकारी के सामने आत्मसमर्पण कर दें। भारतीय जनसंघ ने हमेशा पाक अधिकृत जम्मू-कश्मीर पर पूर्ण अधिकार की मांग की है। हम राज्य का विभाजन और पाकिस्तान को किसी भी भाग का सौंपना सहन नहीं करेंगे। आज जब पाकिस्तान धमकियाँ दे रहा है, नेहरूजी का यह वक्तव्य राजनीतिक अकुशलता और कायरता को दर्शाता है, जो देश के लिए अपमानजनक है। पड़ोसी आक्रामक राष्ट्र के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध रखने की उनकी बड़ी घोषणाएँ इस कायरतापूर्ण विश्वासघाती कृत्य को छिपा नहीं सकतीं। देश के नागरिकों को प्रधानमंत्री को चेतावनी देनी होगी कि वे पाकिस्तान को संतुष्ट करने के लिए कश्मीर की बलि कतई न दें"।[1]

जनमत संग्रह के संबंध में पंडित दीन दयाल उपाध्याय ने अपने वक्तव्य में कहा कि "यदि पाकिस्तान सभी मुद्दों को छोड़कर जनमत संग्रह के माध्यम से कश्मीर समस्या सुलझाना चाहता है, तो हमें पहले भारत विभाजन के प्रश्न पर जनमत संग्रह करना होगा। सुरक्षा परिषद में ऐंग्लो-अमरीकी शक्तियों द्वारा प्रस्तुत कश्मीर प्रस्ताव भारत के प्रति अन्यायपूर्ण और अपमानजनक है। जनसंघ की सभी इकाइयाँ जनसभाएँ आयोजित करके शासन और विश्व की शक्तियों को जनभावना से अवगत कराएँगी। इस षड्यंत्र में उन शक्तियों का हाथ है जो पाकिस्तान को इस प्रश्न के सहारे अपने नियंत्रण में रखना चाहती हैं। अंग्रेजों की अनुदार नीति, अपनी साम्राज्यवादी परंपरा को निभाने के लिए आज भी काम कर रही है। मैं सरकार से अनुरोध करता हूँ कि वह सुरक्षा परिषद से अपना प्रतिनिधि वापस बुला ले। यदि पाकिस्तान सभी मुद्दों को छोड़कर जनमत संग्रह के माध्यम से समस्या सुलझाना चाहता है, तो हमें पहले भारत विभाजन के प्रश्न पर जनमत संग्रह करना होगा"।[2]

कश्मीर मे मौजूद पृथक संविधान सभा पर उनके विचार:-

पंडित दीन दयाल उपाध्याय इस बात से भलीभाँति परिचित थे की जम्मू-कश्मीर की आम जनता के बीच भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 व 35A के तहत प्राप्त रियायतों में प्रचलित तथ्यों के अलावा एक अनभिज्ञता थी। साथ ही जम्मू कश्मीर के अपने संविधान की भी वहाँ कि आम जनता को बहुत कम जानकारी थी। पंडित जी के अनुसार मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि, धारा 370 जो जम्मू-कश्मीर को भारत का अभिन्न अंग मानती है, वास्तविकता में वह भारत की एकता और अखंडता के लिए एक अभिशाप है क्योंकि इसमें कई प्रावधान ऐसे हैं, जो कश्मीरी आवाम को देश के अन्य राज्यों के शासन तथा राजनीति में भाग लेने की अनुमति नहीं देते। इससे पहले कि हम इन प्रावधानों पर विचार करें, हमें देखना चाहिए कि आखिरकार कश्मीर के लिए पृथक संविधान की आवश्यकता ही क्यों महसूस हुई और उस संविधान का औचित्य ही क्या था।

भारतीय संदर्भ में सर्वप्रथम पृथक संविधान की कल्पना अंग्रेजों द्वारा उस समय की जब वह अपने भारतीय उपनिवेश को दो भागों भारत ओर पाकिस्तान में बांटकर यहाँ से जाने की तैयारी कर रहे थे। उस समय देशी रियासतों को यह

[1] पाञ्चजन्य, अप्रैल 23, 1956

[2] पाञ्चजन्य, नवंबर 25, 1957

अधिकार दिया गया था कि वे अपने विवेक से जिसमे चाहें उस नव स्वतंत्र राष्ट्र में शामिल हो सकती हैं। अंग्रेजों के इस निर्णय ये पीछे यह धारणा यह रही कि देशी राज्यों के शासक प्रभुसत्ता संपन्न हैं। हम यहां देशी राज्यों के एकीकरण पर विचार नहीं करेंगे, क्योंकि इसका विवरण श्री वी.पी. मेनन की प्रसिद्ध पुस्तक या भारत सरकार द्वारा 'देशी राज्यों' के संबंध में प्रकाशित 'श्वेतपत्र' से ज्ञात किया जा सकता है। लेकिन यहाँ हम यह स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि हमने कभी यह विश्वास नहीं किया कि देशी राज्य प्रभुसत्ता संपन्न हैं। हैदराबाद और जूनागढ़ में की गई पुलिस कार्रवाई ने इसे और स्पष्ट कर दिया। इसके अलावा कश्मीर के संबंध में पं. नेहरू ने संसद में घोषणा की थी कि "यदि महाराज ने 'विलय पत्र' पर हस्ताक्षर नहीं किए होते, तो भी भारत ने अपनी सेनाएँ कश्मीर की रक्षा के लिए भेजी होती, क्योंकि देश का जो भाग किसी अन्य देश से संबद्ध नहीं है, वह वैधानिक दृष्टि से भारत का अंग है। भारतीय संविधान सभा को पूरे भारत के लिए संविधान बनाने का अधिकार है। जम्मू-कश्मीर भी भारत का हिस्सा है और इसलिए वह उनके लिए भी संविधान बनाने का अधिकार रखती है"। इसलिए जब बख़्शी गुलाम मोहम्मद कहते हैं कि 'इस प्रभुसत्ता संपन्न सभा' के निर्णय को कोई नहीं बदल सकता, तो वे भारतीय संसद की प्रभुसत्ता को चुनौती देते हैं।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय के अनुसार "प्रभुसत्ता के अंतर्गत कोई दूसरी प्रभुसत्ता नहीं हो सकती। या तो भारतीय जनता प्रभुसत्ता संपन्न हैं और जम्मू-कश्मीर के लोग उसका हिस्सा हैं, या यदि जम्मू-कश्मीर खुद को स्वतंत्र प्रभुसत्ता संपन्न घोषित करता है, तो भारतीय संसद द्वारा स्वीकृत किसी भी क़ानून का वहाँ लागू होना साम्राज्यवाद का प्रतीक है। हमारी धारणा है कि बख़्शी गुलाम मोहम्मद ने यह शब्द या तो निरर्थक रूप में कहे हैं या यह अब्दुल्ला समर्थक लोगों को तुष्ट करने की एक नीति है। शेख अब्दुल्ला के भाषण के उद्धरण भी इसी उद्देश्य से थे कि जनता को यह दिखाने के लिए कि वे भी शेख अब्दुल्ला से किसी प्रकार भिन्न विचार नहीं रखते हैं। फर्क सिर्फ इतना हैं शेख अब्दुल्ला ने अपनी पृथकतावादी भावनाओं को रणवीरपुरा में व्यक्त किया था और बख़्शी गुलाम मोहम्मद ने विधानसभा को चुना। इसलिए यह आवश्यक है कि किसी भी तरह, भारत सरकार को समय से पहले चेतना चाहिए"।

5 नवंबर 1956 को पांचजन्य के एक अंक मे प्रकाशित अपने एक लेख में पंडित जी अनुच्छेद 370 का हवाला देते हुए लिखते हैं कि "इसमें कोई संदेह नहीं कि उक्त अनुच्छेद राज्य में भारतीय संविधान लागू होने पर कुछ नियंत्रण निर्धारित करता है, लेकिन यह एक अस्थायी व्यवस्था थी। इस परिच्छेद की अंतिम धारा के अनुसार, यह अनुच्छेद पहले ही समाप्त हो जाना चाहिए था। अगर यह समाप्त नहीं हुआ है तो इसका उत्तरदायित्व जम्मू-कश्मीर सरकार पर है, जिसने अन्य सरकारों की तरह राजनैतिक चतुराई नहीं दिखाई। वास्तव में इस समय आवश्यकता इस बात की थी कि राज्य सरकार प्रस्ताव पारित कर उक्त अनुच्छेद को समाप्त कर देती और इस प्रकार समस्या का समाधान हो जाता। दुर्भाग्य से ऐसा नहीं हुआ"।

पंडित दिन दयाल उपाध्याय का मानना था कि पं. नेहरू और उनके समर्थक कश्मीर को एक विशेष राज्य के तौर पर देखते हैं इसीलिए वे कश्मीर में भारतीय संविधान के सीमित प्रयोग की ही वकालत करते हैं पंडित जी के अनुसार "कश्मीर की समस्या को राष्ट्र संघ में ले जाना और राज्य में मुसलमानों का बाहुल्य ही ऐसी दो बातें हैं, जो कश्मीर को अन्य राज्यों से विशेष बनाती हैं। पं. नेहरू और बख़्शी गुलाम मोहम्मद का संकेत इन्हीं बातों की ओर है। जहाँ तक अंतरराष्ट्रीय पहलू का संबंध है, हर कोई, यहाँ तक कि पं. नेहरू भी समझ चुके हैं कि इस प्रश्न को सुरक्षा परिषद में ले जाना एक ग़लती थी और राष्ट्र संघ से इसका हल निकलना संभव नहीं है। यह भी स्वीकार किया गया है कि राज्य के नए विधान के निर्माण में विलंब नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 370 उस समय तक के लिए एक बार को उचित समझा जा सकता था, जब तक कि हमारा संविधान नहीं बना था। लेकिन यदि हम आज भी उस पृथकतावादी अनुच्छेद को बनाए रखते हैं, तो इससे कश्मीर में अलगाववाद फैलाने में पाकिस्तान को सहायता प्राप्त होगी"।

पंडित जी के शब्दों में "यदि हम पाकिस्तान की द्विराष्ट्र सिद्धांत पर आधारित दलील को निष्प्रभ करना चाहते हैं तो हमें मन, वचन, कर्म से कश्मीर सहित एक राष्ट्र के सिद्धांत पर दृढ़ रहना पड़ेगा। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री सुहरावर्दी ने पाकिस्तान के निमित्त संयुक्त निर्वाचन की वकालत की थी, जिसमें भी जहाँ तक कश्मीर का प्रश्न है, द्वि-राष्ट्र सिद्धांत का ही प्रामुख्य था। यदि वह यह अनुभव करने लगे हैं कि पाकिस्तान के लिए यह सिद्धांत अनुपयुक्त सिद्ध हो चुका है तो इसे कश्मीर के बारे में भी मान लेना चाहिए। और इसके पहले कि पाकिस्तान में

कोई व्यक्ति इस सत्यता का अनुभव करे, पं. नेहरू और बख़्शी गुलाम मोहम्मद को इसका अनुभव हो जाना चाहिए। कश्मीर के लिए पृथक् संविधान की माँग यह दर्शाती है कि सत्य को स्वीकार नहीं किया गया है"।

पंडित के अनुसार यदि हम प्रस्तावित कश्मीरी संविधान को देखें तो वह न केवल पृथकतावादी है, बल्कि उसकी रूपरेखा भी भारतीय संविधान से बहुत अलग है। कश्मीर सरकार उपयुक्त नहीं समझती कि कश्मीरी लोग खुद को भारत का नागरिक समझें और एक साझे राष्ट्रवादी होने का अनुभव करें। कहा जाता है कि भारत और कश्मीर की नागरिकता समान रहेगी, किंतु भारतीय संविधान में वर्णित अधिकार तथा शक्तियां जम्मू-कश्मीर के नागरिकों को प्राप्त नहीं होंगे तथा अन्य स्थानों पर निवास करने वाले लोगों को जम्मू-कश्मीर राज्य के लोगों के समान अधिकार प्राप्त नहीं होंगे। जम्मू तथा कश्मीर के लोगों को संसद के लिए मतदान करने का अधिकार नहीं होगा। शायद उन्हें कुछ मौलिक अधिकार प्राप्त हों, किंतु उनका आधार संविधान नहीं होगा। जम्मू-कश्मीर में चुनाव तथा जनगणना तो होंगे, किंतु भारत के समान नहीं। सर्वोच्च न्यायालय का भी वहाँ सीधा अधिकार क्षेत्र नहीं होगा। हाईकोर्ट के जजों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा नहीं बल्कि सदर-ए-रियासत द्वारा की जाएगी। संविधान का मसविदा इस प्रकार की कुछ बातें भी प्रस्तावित करता है, जिनके अनुसार राष्ट्रपति की शक्तियाँ भी सीमित हो जाती हैं। सदर-ए-रियासत की नियुक्ति और पदच्युति को लेकर भी विरोधाभास है। एक ओर कहा जाता है कि सदर-ए-रियासत तब तक पद पर रहेंगे जब तक राष्ट्रपति चाहेंगे, किंतु दूसरी ओर राज्य विधानसभा द्वारा सामान्य बहुमत के आधार पर सिफारिश किए जाने पर राष्ट्रपति सदर-ए-रियासत की नियुक्ति करेंगे। राज्य विधानसभा द्वारा दो-तिहाई बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पारित किए जाने पर सदर-ए-रियासत को पदच्युत भी किया जा सकेगा। यदि सभी कुछ विधानसभा द्वारा तय किया जाना है तो 'राष्ट्रपति की इच्छानुसार' का क्या अर्थ है?

इसके अलावा राज्य विधानसभा में ऐसा कोई संशोधन प्रस्तुत नहीं किया जा सकेगा, जो भारत और राज्य के बीच निर्धारित संबंधों में परिवर्तन करे। इसके पीछे यह तर्क दिया जाता है कि इस व्यवस्था से एकीकरण की अटकलें समाप्त हो जाएँगी तथा अनिश्चित स्थिति का अनुचित लाभ नहीं उठाया जा सकेगा। पंडित जी के अनुसार "इस व्यवस्था का उद्देश्य अनुच्छेद 370 को स्थायी बनाना है, क्योंकि राज्य के संविधान में कोई प्रस्ताव एक बार पारित होने के बाद भविष्य में हमारे संविधान के लिए वहाँ के द्वार सदैव बंद हो जाएँगे तथा राज्य के निवासी भविष्य में भारत और अन्य राज्यों की सेवाओं से वंचित हो जाएंगे। भारत सरकार को कश्मीर संविधान के मसविदे में अंतर्निहित भावनाओं पर ध्यान देना चाहिए और भारत को छिन्न-विच्छिन्न होने से बचाना चाहिए। यदि सरकार इस कर्तव्य को पालन करने में असफल होती है, तो सभी राष्ट्रीय शक्तियों को कश्मीर संविधान से असहमति ही नहीं बल्कि पूरी शक्ति से उसका विरोध भी करना चाहिए"।

पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर पर दीन दयाल उपाध्याय जी के विचार

पंडित जी के विचारों में पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर पाकिस्तान से भारत के रिश्तों को लेकर सबसे प्राथमिक विषयों में से एक है। उनके अनुसार भारत सरकार को तथाकथित आज़ाद कश्मीर को पुनः प्राप्त करने के लिए तत्काल सैन्य और राजनयिक कार्रवाई करनी चाहिए। पंडित दीन दयाल जी का मानना है कि कश्मीर का हिस्सा भारत का अभिन्न अंग है। भारत सरकार को मांग करनी चाहिए कि पाकिस्तान इस क्षेत्र को छोड़ दे और यदि पाकिस्तान सहमत नहीं है, तो भारत सरकार को तथाकथित आज़ाद कश्मीर को पुनः प्राप्त करने के लिए राजनयिक संबंधों को तोड़ने से लेकर युद्ध की घोषणा करने तक सभी आवश्यक उपाय करने चाहिए। पंडित का मानना है कि पाकिस्तान के कब्जे वाला कश्मीर भारत के लिए प्रतिष्ठा से ज्यादा आध्यात्मिक मुद्दा है क्योंकि भारत और कश्मीर की आत्माएं एक हैं।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय और कश्मीर: एक दृष्टिकोण

पंडित दीन दयाल उपाध्याय का मानना था कि जम्मू-कश्मीर के कुछ हिस्सों पर पाकिस्तान का अवैध कब्जा इसलिए है क्योंकि भारतीय सेना को उन्हें मुक्त करने की अनुमति नहीं दी गई। उन्होंने जोर देकर कहा कि यदि भारतीय जनसंघ और प्रजा परिषद ने संघर्ष और बलिदान न दिया होता, तो कश्मीर का वह भाग भारत का हिस्सा नहीं बनता। सरकार की नीतियाँ सैनिक प्रयासों को निष्फल कर सकती थीं। शेख अब्दुल्ला राजा हरि सिंह की नीतियों को समाप्त

करना चाहते थे, लेकिन पंडित प्रेमनाथ डोगरा[3] और श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने शेख अब्दुल्ला को अपनी नीति बदलने पर मजबूर किया। शेख अब्दुल्ला की गिरफ्तारी और श्यामा प्रसाद मुखर्जी के बलिदान के बाद, कश्मीर नीति में बदलाव आया, लेकिन पूर्ण विलय की प्रक्रिया अभी अधूरी है।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय के शब्दों में "भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 व 35A और राज्य की विधानसभा में निहित प्रावधानों से स्पष्ट है कि राज्य का राष्ट्रीय और भावनात्मक स्तर पर भारत से एकीकरण अधूरा है। यदि जम्मू-कश्मीर भारत का हिस्सा है, तो भारतीय संविधान के सभी प्रावधान वहाँ भी लागू होने चाहिए। जम्मू-कश्मीर के चुनाव संबंधी प्रावधानों में भी राज्य सरकार का हस्तक्षेप बहुत अधिक है। भारतीय निर्वाचन आयोग का कार्यक्षेत्र राज्य तक बढ़ाना तब तक अधूरा रहेगा जब तक चुनाव संबंधी सभी प्रावधान वहाँ लागू नहीं होते। लोकसभा के लिए प्रतिनिधियों का चुनाव नागरिकों का मूल अधिकार है, और इससे वहाँ के लोगों को वंचित करना राज्य और भारत के संबंधों में दरार को दर्शाता है। भारतीय जनसंघ ने अपने नागपुर अधिवेशन में संविधान के अनुच्छेद 370 को समाप्त करने का आग्रह किया है। जब तक यह अनुच्छेद रहेगा, तब तक राज्य के संवैधानिक संबंध सामान्य नहीं होंगे। राज्य को दिया गया विशेष दर्जा केवल सरकार को विशेषाधिकार देता है, नागरिकों को नहीं। इस भेदभावपूर्ण व्यवहार का देश विरोधी शक्तियाँ भारत के विरुद्ध प्रयोग करती हैं। इसलिए राज्य के नागरिकों को वही अधिकार मिलने चाहिए जो अन्य नागरिकों को उपलब्ध हैं, और भेदभाव समाप्त किया जाना चाहिए"।

अंततः यह कहा जा सकता है कि पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी ने कश्मीर को लेकर जो एक सपना देखा था उसी की प्रेरणा से आज कश्मीर अनुच्छेद 370 और 35A द्वारा प्राप्त भेदभावपूर्ण विशेषाधिकारों को त्याग कर विकास के मार्ग पर अग्रसर है। आज, उनके विचार और सिद्धांत न केवल कश्मीर की प्रगति के लिए प्रेरणा स्रोत हैं, बल्कि संपूर्ण भारत के लिए भी मार्गदर्शन का कार्य करते हैं। आर्टिकल 370 व आर्टिकल 35-A को समाप्त करते हुए मौजूदा गृहमंत्री अमित शाह जी ने अपने संसद मे दिए अभिभाषण मे भी पंडित दीन दयाल उपाध्याय व श्यामा प्रसाद मुखर्जी के विचारों को स्थान दिया और कश्मीर के संदर्भ मे उनके स्वप्नों जो कश्मीर में शांति, समृद्धि और सौहार्द का वातावरण से परिपूर्ण थे तथा जहां हर नागरिक अपने अधिकारों और कर्तव्यों का पालन करते वक्त एक राष्ट्र, एक निशान, एक विधान की सामूहिक राष्ट्रवादी भावना से ओतप्रोत हो, का भी उल्लेख किया।

[3] प्रेमनाथ डोंगरा जम्मू कश्मीर प्रांत के नेता थे इन्होंने कश्मीर का भारत मे पूर्ण विलीनीकरण का समर्थन किया तथा बलराज माधोक के साथ मिलकर 1947 मे प्रजा परिषद पार्टी की स्थापना किया ।

संदर्भ सूचीः -

a. महेश चंद्र शर्मा, दीन दयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वगमय, खण्ड 10, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016.
b. बजरंग लाल गुप्ता, पं. दीन दयाल उपाध्याय जीवन दर्शन और समसामयिकता, खण्ड 5, कितबवाले प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2022.
c. सुमंत्रा बोस, कश्मीर स्टस ऑफ कॉफलिकट्स, पाथ टू पीस, हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003.
d. दीन दयाल उपाध्याय, पोलिटिकल डायरी, सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली,2014.
e. हरीश दत्त शर्मा, राष्ट्रीय जीवन माल पं. दीनदयाल उपाध्याय, डायमॉनइस बुक्स, नई दिल्ली, 2012.